International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 1; Issue 6; November 2016; Page No. 33-35

काव्यालंकार एवं काव्यप्रभावृत्ति में प्रतिपादित शब्दालंकारों की समीक्षा

अमित कुमार

शोधछात्र (पीएच.डी.), संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत।

(क) पुराण परिचय

अग्निपुराण को भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने एक स्वर में 'भारतीय ज्ञानकोष' की गौरवान्वित संज्ञा से विभूषित किया है। इस ग्रन्थ की यह विशिष्टता अग्निपुराण के काव्यशास्त्रीय भाग पर भी घटित होती है। अग्निपुराण के (337 से 347) इन 11 अध्यायों में काव्यस्वरूप, रस, गुण, दोष, रीति एवं अलंकार पर प्रकाश डाला गया है। अग्निपुराण का यह निरूपण विवेचनात्मक एवं व्याख्यानात्मक न होकर संग्रहात्मक प्रतीत होता है।

(ख) टीका परिचय

अग्निपुराण के इन 11 अध्यायों पर गंगाधर कविराज द्वारा काव्यप्रभावृत्ति नामक टीका लिखी गई। यह टीका भामह, दण्डी, भोज इत्यादि आचार्यो के सिद्धान्तों के द्वारा अग्निपुराण के क्लिष्ट तथ्यों को सुबोध बनाती है। इसमें काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का वैज्ञानिक एवं दार्शनिक धरातल पर विवेचन किया गया है।

(ग) भामह परिचय

आचार्य भरत जैसे रस को काव्यात्मा स्वीकार करते हैं वैसे ही आचार्य भामह अलंकार को काव्यात्मा के रूप में स्वीकार करते हैं। अलंकारों की स्थिति को इन्होंने काव्य में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। रस आदि को अङ्गरूप में उपकारक के रूप में सिद्ध किया। उन्होंने रस, भाव आदि का समावेश अलंकारों में कर अलंकारों का अङ्गित्व और रस का अङ्गत्व प्रतिपादित किया था।

(घ) अलंकार–परिभाषा

काव्यशास्त्रज्ञों द्वारा अलंकारों का द्विधा विभाजन किया गया। पहले जो अलंकारों को काव्यात्मा के रूप में मानते हैं वे अलंकारों को अन्तःतत्त्व स्वीकार करते हैं इनको मानने वाले भामह, दण्डी, उद्भट अनेकशः विद्वान हैं। दूसरी तरफ जो अलंकारों को मात्र उपकारक मानते हैं। उनके अनुसार अलंकार बाह्य तत्त्व हैं। ये आचार्य, मम्मट, विश्वनाथ, आनन्दवर्धन इत्यादि है।

(i) अलंकृति इति अलंकार – इस व्युत्पत्ति के अनुसार अलंकारों को काव्य की आत्मा के रूप में माना गया है। काव्य में सौन्दर्य के एवं रमणीयता के जितने आधायक तत्त्व है, उनको भामहादि आचार्यो ने अलंकारों में परिगणित कर लिया।

(ii) अलंक्रियतेऽनेन इति अलंकार – यह व्युत्पत्ति ध्वनिवादियों की है। जो अलंकारों को बाह्यतत्त्व के रूप में स्वीकार किया है। ध्वनिकार ने कहा है–

> रसाक्षिप्ततया यस्य बन्ध शक्यक्रियो भवेत्।
> अपृथग्यत्ननिवर्त्य सोऽलंकारो ध्वनौ मतः।।

(ङ) काव्यप्रभावृत्ति के अनुसार अलंकार परिभाषा

काव्यप्रभावृत्ति अलंकारवादी टीका है। यह अलंकारों को काव्यात्मा के रूप में मानती है। अलंकारों की परिभाषा काव्यप्रभावृत्ति में इस प्रकार है – काव्यशोभाकरान् धर्मान अलंकारान् प्रचक्षते।[1]

अर्थात् काव्य के शोभाकारक धर्म अलंकार होते हैं। इस परिभाषा से स्पष्ट है कि काव्य में सौन्दर्य एवं रमणीयता के जितने आधायक तत्त्व होते हैं वे अलंकारों के अन्तर्गत आते हैं। यह परिभाषा दण्डी के अलंकारलक्षण से ज्यों के त्यों मिलती हैं।

(च) भामह के अनुसार अलंकार परिभाषा

काव्यालंकार में भामह ने काव्य के शोभाधायक तत्त्व को अलंकार कहा है। उनका कथन है कि 'न कान्तमपि निर्भूषं विभाति वनितामुखम्।' अर्थात् जैसे रमणी का मुख सुन्दर होते हुए भी अलंकार के अभाव में सुशोभित नहीं होता। वैसे ही काव्य भी अलंकारों के बिना सुशोभित नहीं होता। भामह ने काव्य में अलंकारों को प्रधानता दी थी। काव्य में सौन्दर्य के तथा रमणीयता के जितने आधायक तत्त्व है उनको उन्होंने अलंकारों में परिगणित कर लिया हैं। भामह ने शब्द और अर्थ की वक्रता से युक्त उक्ति को अलंकार कहा है 'वक्राभिधेयशब्दोक्तिरिष्ठा वाचामलङ्कृति।'

(छ) अलंकारों के प्रकार

जिस तरह से कानों में पहने जाने वाले कुण्डलादि कर्णालंकार, हाथों में पहने जाने वाले केयूरादि हस्तालंकार तथा पदाश्रित नुपूरादि पादालंकार कहलाते हैं। उसी प्रकार शब्दाश्रित शब्दालंकार, अर्थाश्रित अर्थालंकार और उभयाश्रित उभयालंकार कहलाते हैं –

(i) शब्दालंकार – काव्यप्रभावृत्ति में 9 शब्दालंकार है एवं भामह ने 2 शब्दालंकार माने हैं।
(ii) अर्थालंकार – काव्यप्रभावृत्ति में 8 अर्थालंकार है एवं भामह ने 36 अर्थालंकारों का वर्णन किया है।
(iii) उभयालंकार – काव्यप्रभावृत्ति में 8 उभयालंकार है परन्तु भामह ने स्पष्ट उभयालंकारों का वर्णन नहीं किया है।

(ज) काव्यप्रभावृत्ति के शब्दालंकार

जिस काव्य में चमत्कार का जनक शब्द हो उसे शब्दालंकार कहते हैं। काव्यप्रभावृत्ति में नौ शब्दालंकार हैं – (1) छाया (2) मुद्रा (3) उक्ति (4) युक्ति (5) गुम्फना (6) वाकोवाक्य (7) अनुप्रास (8) चित्र (9) दुष्कर।

1. छाया – अन्य के कथन की अनुकृति (हद्वत् अनुकरण) छाया हैं। इसके 4 भेद हैं – (1) लोकोक्ति (2) छेकोक्ति (3) अर्भकोक्ति (4) मतोक्ति।

2. मुद्रा – किसी विशेष अभिप्राय से कवि की शक्ति का प्रदर्शन

[1] काव्यशोभाकरान् धर्मानलङ्कारान प्रचक्षते।
ते चाद्यापि विकल्प्यन्ते कस्तान् कात्स्र्येन वक्ष्यति।। काव्यादर्श 2/1

करने वाली उक्ति मुद्रा कहलाती है। इसे शय्या भी कह सकते हैं। इसके कोई भेद नहीं है।

3. **उक्ति** – लोक व्यवहारानुकूल एवं सज्जनों के हृदय को स्पर्श करने वाला कथन 'उक्ति' कहलाता है। इसके 6 भेद है – (1) विधि (2) निषेध (3) नियम (4) अनियम (5) विकल्प (6) परिसंख्या।
4. **युक्ति** – दो अयुक्त 'वाक्य और वाचक' को मिलाने वाली कल्पना 'युक्ति' कही गई है, इसके 6 भेद हैं – (1) पदगत (2) पदार्थगत (3) वाच्यगत (4) वाच्यार्थगत (5) विषयगत (6) प्रकरणगत।
5. **गुम्फना**[2] – शब्द और अर्थ के क्रम को ध्यान में रखते हुए उचित प्रकार से किया गया संयोजन 'गुम्फना' अलंकार कहलाता हैं। (1) शब्दगत (2) अर्थगत (3) शब्दार्थगत।
6. **वाकोवाक्य** – उक्ति, प्रयुक्ति वाला वाक्य 'वाकोवाक्य' कहलाता है। इसके दो भेद हैं – (1) ऋजु वाकोवाक्य (2) वक्रवाकोवाक्य। भामह के वक्रोक्ति का समावेश इसी में होता है।
7. **चित्र** – कवियों की गोष्ठी में पढ़ने मात्र से आश्चर्य उत्पन्न करने वाला कवि का वाग्बन्ध 'चित्र' कहलाता है।
   आचार्य भामह ने चित्रालंकार का निरूपण नहीं किया हैं। दण्डी ने 'दुष्करगोमूत्रिका' आदि चित्रमार्ग का उल्लेख अवश्य किया है किन्तु इसका कोई स्वतन्त्र लक्षण नहीं दिया है। इससे स्पष्ट है कि काव्यप्रभावृत्ति में ही सर्वप्रथम चित्रालंकार को स्वतंत्र शब्दालंकार के रूप में वर्णित किया है। इसके अनन्तर आचार्य रुद्रट एवं भोज ने चित्र को स्वतंत्र शब्दालंकार माना है।
   चित्रालंकार के भेद – नाना अर्थों के अनुयोग से चित्रालंकार के सात भेद होते हैं – प्रश्न, प्रहेलिका, गुप्तपद, च्युतपद, दत्तपद, च्युतदत्तपद, समस्या।
8. **दुष्कर** – यह अलंकार क्लिष्ट होता है तथा इससे कवि की कवित्व शक्ति का परिचय मिलता है। नीरस होते हुए भी यह अलंकार पण्डितों को रुचिकर लगता है।

   दुःखेन कृतमत्यर्थं कविसामर्थ्यं सूचकम्।
   दुष्करं नीरसत्वेऽपि विदग्धानां महोत्सवः।।

9. **अनुप्रास** – पद और वाक्यों की आवृत्ति को अनुप्रास कहते हैं। **स्यादावृत्तिरनुप्रासो वर्णानां पदवाक्यों** – अ.पु. 343/11 (अ) अनुप्रास दो तरह का है – (1) पदानुप्रास (2) वाक्यानुप्रास।

(अ) पदानुप्रास – पदानुप्रास दो तरह का है –
(i) वर्णावृत्ति (ii) पदावृत्ति।

(i) वर्णावृत्ति – वर्णावृत्ति के आधार पर अनुप्रास के दो भेद माने गये हैं –

(क) एकवर्णगतावृत्ति – इसके अन्तर्गत मधुरा, ललिता, प्रौढ़ा, भद्रा एवं परुषा आदि पाँच वृत्तियाँ आती है। इनका वर्णन काव्यप्रभावृत्ति में विस्तारपूर्वक मिलता है।

(ख) अनेकवर्णगतावृत्ति – इसमें आवृत्ति वर्णों के अर्थ भिन्न–भिन्न होते हैं इसके दो भेद हैं – (1) सव्यपेत (2) अव्यपेत।

1. **सव्यपेत** – यहाँ पर व्यवधान के साथ वर्णों की आवृत्ति हो उसे सव्यपेत कहते हैं।
2. **अव्यपेत** – जहाँ पर वर्णो की आवृत्ति व्यवधान रहित हो उसे अव्यपेत कहते हैं।

इन दो भेदों के पुनः स्थान और पाद के क्रम से चार भेद होते हैं। स्थान के तीन भेद होते हैं – (1) आदि (2) पादमध्य (3) पादान्त। पाद के तीन भेद – (1) एकपाद (2) द्विपाद (3) त्रिपाद। इस प्रकार इसके अनेक भेद बन जाते हैं।

(ii) पदावृत्ति अनुप्रास – भिन्न प्रयोजन से जब एक ही पद की आवृत्ति उसी रूप में होती है उसे पादावृत्ति अनुप्रास कहते हैं इसके दो भेद हैं – (1) स्वतन्त्र पदावृत्ति (2) अस्वतन्त्र पदावृत्ति। इनके भी आवान्तर समस्त पदावृत्ति व असमस्त पदावृत्ति के नाम से अनेक उपभेद हो जाते हैं।

वाक्यावृत्ति अनुप्रास – इस अनुप्रास में पदावृत्ति के समान ही वाक्य की आवृत्ति होती है। जिस किसी भी आवृत्ति से जो समानता अनुभव की जाती है वह रूपविन्यास की हो या पदविन्यास की, वह वाक्यावृत्ति अनुप्रास के अन्तर्गत आती हैं।

(झ) आचार्य भामह के शब्दालंकार – काव्यप्रभावृत्ति में नौ शब्दालंकार है वही भामह के काव्यालंकार में केवल 2 शब्दालंकार है – (1) अनुप्रास (2) यमक। काव्यप्रभावृत्ति के छाया, मुद्रा, उक्ति, युक्ति, गुम्फना, वाकोवाक्य, चित्र, दुष्कर इनमें से कुछ अलंकारों को भामह ने अर्थालंकारों में समाहित किया है और कुछ को माना ही नहीं है।

1. **अनुप्रास** – भामहकृत काव्यालंकार में अनुप्रास स्वरूप विन्यास में कहा है – सरूपवर्णविन्यासमनुप्रासं प्रचक्षते।
   भामह के अनुसार "समान रूप वाले वर्णों के विन्यास को 'अनुप्रास' कहते हैं" तथा अनुप्रास के दो भेद किए हैं – (1) ग्राम्यानुप्रास (2) लाटानुप्रास।
   काव्यप्रभावृत्ति के पदावृत्ति अनुप्रास को भामह ने लाटानुप्रास कहा है।
2. **यमक** – काव्यप्रभावृत्ति में यमक अलंकार को अनुप्रास के पदगत अनेकवर्णगतावृत्ति अनुप्रास का ही भेद माना है उसका स्वतन्त्र विवेचन नहीं किया है जबकि भामह, दण्डी इत्यादि अलंकारिकों ने यमक को स्वतन्त्रालंकार माना है।
   आचार्य भामह यमक लक्षण में कहते हैं –

   आदिमध्यान्तयमकं पादाभ्यासं तपावली।
   समस्तपादयमकमित्येतत्पंचधोच्यते।।

   तथा पाँच भेदों का निरूपण किया है।

उपसंहार

भामह एवं काव्यप्रभावृत्ति के काव्य सिद्धान्त मिलते–जुलते हैं। किसके सिद्धान्त किससे प्रेरित है इस विषय पर कुछ समालोचकों ने भामह को अग्निपुराण से पूर्ववर्ती और कुछ समालोचकों ने भामह को अग्निपुराण से उत्तरवर्ती मानने के पक्ष में है। परन्तु काणे महोदय ने अग्निपुराण को भामह के बाद मानने का आग्रह किया है।
अग्निपुराण की टीका काव्यप्रभावृत्ति एवं काव्यालंकार में शब्दालंकारगत कुछ समानताएँ एवं विषमताएँ है जो इस प्रकार है –

साम्य

कालप्रभावृत्ति एवं भामह के काव्यालंकार में बहुत कुछ समानता है यह समानता तीन प्रकार से हैं – (1) दोनों ग्रन्थों में कुछ वाक्य

[2] अग्निपुराण – 342/31

ऐसे हैं जो केवल अर्थ में ही नहीं अपितु शब्दों में भी समान है। (2) कुछ वाक्य ऐसे हैं जिनमें एक ने दूसरे की समालोचना की है। (3) और कुछ वाक्य ऐसे हैं जिनमें भिन्नता होने पर भी एक का दूसरे पर प्रभाव अवश्य पड़ा है।

काव्यालंकार व काव्यप्रभावृत्ति में समानता जैसे – रूपक, आक्षेप, समासोक्ति, पर्यायोक्त और अप्रस्तुतप्रशंसा इन पाँच अलंकारों के लक्षण ज्यों के त्यों मिलते हैं – यथा – रूपक

उपमानेन यत्तत्वमुपमेयस्य कथ्यते।
गुणानां समतं दृष्ट्वा रूपकं नाम तद्विदुः।।

अग्निपुराण 344/227, काव्यालंकार 2/21

आक्षेप

प्रतिषेध इवेष्टस्य यो विशेषोऽभिधित्सया।
तमाक्षेप ब्रवन्त्यत्र .....।।

अग्निपुराण 345/5, काव्यालंकार 2/68

समालोचना

गंगाधर ने कई स्थानों पर भामह की आलोचना की हैं जैसे – भामह ने काव्य के पाँच मुख्य भेद किये हैं – सर्गबन्ध, अभिनेयार्थ, आख्यायिका कथा और अनिबंद्ध है।[3] इसमें भामह ने आख्यायिका और कथा को गद्यकाव्य के दो स्वतन्त्र भेद माना है। परन्तु काव्यप्रभावृत्ति का कथन है कि ये दोनों वस्तुतः एक ही है, केवल नाम का भेद है।[4]

वैषम्य

(1) काव्यप्रभावृत्ति में सभी अलंकारों का मूल 'उपमा' हैं। दूसरी तरफ भामह वक्रोक्ति को समस्त अलंकारों का मूल मानते हैं। उनका मानना है कि वक्रोक्ति के बिना कोई अलंकार हो नहीं सकता। यहाँ तक कि अतिशयोक्ति को भी वक्रोक्ति ही मानते हैं। जबकि काव्याप्रभावृत्ति में वक्रोक्ति शब्दालंकार है।

(2) काव्यप्रभावृत्ति में हेतु, सूक्ष्म, लेश प्रमुख अलंकार माने गए हैं जबकि भामह ने इन्हें अलंकार ही स्वीकार नहीं किया क्योंकि उनमें 'वक्रोक्ति' नहीं है।

उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों की तुलनात्मक समीक्षा के पश्चात् यह प्रतीत होता है कि अग्निपुराण भामह का ऋणी हैं। क्योंकि भामह के काव्यालंकार के संक्षिप्त विषयों का अग्निपुराण में बृहद् विवेचन हैं। अकेले अनुप्रास एवं यमक दो शब्दालंकारों के विवेचन में 1 अध्याय है। अग्निपुराण में शब्दालंकारों का जितना विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है उतना भामह व दण्डी ने नहीं किया है।

अतः अग्निपुराण का वर्तमान रूप भरत, भामह, दण्डी, आनन्दवर्धन और भोज के भी बाद का है और शब्दालंकारों को भामह एवं दण्डी से उद्धृत किया हो ऐसा प्रतीत होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. काणे, पी.वी., 'संस्कृत साहित्य का इतिहास', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1966.
2. डे, सुशील कुमार, 'संस्कृत साहित्य का इतिहास', हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, बिहार, 1973.
3. कीथ, ए.बी., 'संस्कृत साहित्य का इतिहास', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1988.
4. उपाध्याय, बलदेव, 'भारतीय साहित्य–शास्त्र', प्रसाद परिषद काशी, द्वितीय संस्करण, 2012.
5. सैनी, सुनीता, 'अग्निपुराण में विविध विधाएँ', अभिषेक प्रकाशन, दिल्ली, 2004.
6. कुमार, कृष्ण, 'अलंकार शास्त्र का इतिहास', साहित्य भण्डार, मेरठ, 1975.
7. गैरोला, वाचस्पति, 'संस्कृत साहित्य का इतिहास', चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1991.
8. पोद्दार, सेठ कन्हैयालाल, 'संस्कृत साहित्य का इतिहास', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1997.
9. उपाध्याय, बलदेव, 'संस्कृत साहित्य का इतिहास', शारदा मन्दिर, बनारस, 1987.
10. नागेन्द्र, 'भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1973.
11. अवस्थी, श्री एवं पाण्डे, विश्वनाथ, 'पुराण पर्यालोचन', चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, 1975.
12. उपाध्याय, बलदेव, 'संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास', उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, 1977.

[3] ए हिस्टी ऑफ संस्कृत पोएटिक्स, S.K. Dey, पृष्ठ 254

[4] सर्गबन्धोऽभिनेयार्थं तथैवाख्यायिकाकथे।
अनिबंध च काव्यादि तत्प्रनः पंचधाच्यते।। काव्यालंकार 1/18